ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-4* Issue-4* May- 2019
Innovation The Research Concept

शोध पत्र के प्रकार

राजमुनि
एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी

व्यक्ति से समाज का निर्माण होता है। यह सच है कि संसार में प्रत्येक व्यक्ति की सोच अलग–अलग होती है। प्रत्येक मनुष्य की अभिरूचि अलग–अलग विषयों में होती है। इसी आधार पर किसी को साहित्यिक विषय में शोध करना पसंद है तो किसी को विज्ञान के क्षेत्र में यही कारण है कि शोध के क्षेत्र में अनेक संभावनाएँ होती है। शोध पत्र लिखते समय विषय, उद्देश्य, चिन्तन, रूचि एवं आवश्यकता के अनुसार उसके अनेक स्वरूप सामने आते हैं।

1. **लोक साहित्य पर आधारित भाोध–पत्रः**– लोक साहित्य पर शोध पत्र लिखने से पहले लोक के विषय में जानना अति आवश्यक है। लोक वह है जिसमें रहने वाले लोग अपने समस्त जीवन को अपनी स्वाभाविक परिस्थितियों, परम्परागत विश्वास, रीति–रिवाज, रहन–सहन, तीज–त्यौहार, मेले–उत्सव आदि के अनुरूप जीते हैं। उनकी अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपने गीत–संगीत होते हैं जिन्हे वे पीढ़ी दर पीढ़ी बरकरार रखते हैं। लोक साहित्य से सम्बन्धित शोध पत्रों को निम्नांकित बिन्दुओं के आधार पर विभाजित कर सकते हैं।

(i) लोक साहित्य को ध्यान में रखते हुए इसके इतिहास पर भी शोध पत्र लिखे जा सकते हैं। जैसे– अलीगढ़ जनपद के स्वांग एवं रागिनी का ऐतिहासित महत्व।

(ii) मथुरा जनपद के लोक गीतों का नाट्य रूपान्तरण।

(iii) दलित गायकों के लोक गीतों का समीक्षात्मक अध्ययन। इस विषय पर किसी तहसील एवं जनपद को लेकर शोध पत्र लिखा जा सकता है।

क. अन्तरविषयी शोध पत्र लिखने से भी लोक साहित्य के विविध पक्षों को उद्घाटित किया जा सकता है। जैसे–

(i) दलित नाटको, स्वांगों, गीतों एवं कलाओं का मनोवैज्ञानिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं समाजशास्त्रीय अध्ययन जैसे विषयों पर भी महत्वपूर्ण शोध पत्र लिखे जा सकते हैं।

(ii) लोक साहित्य की कुछ ऐसी महत्वपूर्ण विधाएं है, जिन पर शोध पत्र के माध्यम से सामाजिक सत्य को उद्घाटित किया जा सकता है। जैसे– जातिवाद, वात्सल्य, अन्तरजातीय प्रेम प्रसंग, व्यंग्य एवं दलित वीरों से सम्बन्धित गीत आदि में से किसी एक पर तैयार शोध पत्र लोक साहित्य का महत्वपूर्ण अंग बन सकता है।

बैजनाथ सिंह साहित्य और परिनिष्ठित साहित्य के अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है– ''लोक साहित्य सामूहिक अवचेतन से उद्भूत होता है। जिसमें अहं–चैतन्य का स्थान नहीं होता। अहं चेतन्यजन्य साहित्य को परिनिष्ठित साहित्य कहा जाता है। यह सर्वमान्य है कि कवि में अहं–चैतन्य अपनी परिपूर्णता में रहता है। अतः उसके समग्र अहं–चैतन्य से उद्भूत साहित्य परिनिष्ठित साहित्य कहलायेगा क्योंकि लोक साहित्य में अहं चैतन्य नहीं होता। अहं–चैतन्य से उत्पन्न होने के कारण ही परिनिष्ठित साहित्य के कृतिकार के साथ कर्ता का नाम और व्यक्तित्व जुड़े रहते हैं। इसके विपरीत सामूहिक अवचेतन से उत्पन्न लोक साहित्य के साथ किसी व्यक्ति विशेष का नाम और व्यक्तित्व जुड़े नहीं रहते। इस प्रकार हम कह सकते हैं। कि जितनी मात्रा में अहं–चैतन्य कम हो जाता है उतनी ही मात्रा में लोक मानस उभरने लगता है। चैतन्य मानस उतना सहज नहीं होता जितना कि लोक मानस। इसलिए लोक साहित्य परिनिष्ठित साहित्य की तुलना में अधिक सहज स्वच्छन्द अभिव्यक्ति होता है। परिनिष्ठित साहित्य उस पूर्ण अहं–चैतन्य मन की अभिव्यक्ति होता है जो कुलीन और विशिष्ट बन जाने के कारण प्रांजल शैली और परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग करता है।''[1]

ख. **अन्तरविशयी भाोध पत्र के विभिन्न स्वरूप** :– किसी एक विषय के साथ दूसरे विषयों को जोड़कर शोध पत्र जब लिखे जाते हैं तो वे अन्तरविषयी शोध पत्र कहलाते हैं। इसमें किसी एक भाषा के साहित्य या साहित्यकार को दूसरे भाषा के साहित्यकार या साहित्य से जोड़कर शोधपत्र लिखे जा सकते हैं। इस प्रकार के शोध पत्रों से समाज के समस्त स्वरूपों जैसे–आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं जातिगत आदि को समग्र रूप से समझने में मद्द मिलती है। इस प्रकार के शोध पत्रों के उदाहरण निम्न है :–

(i) ''जूठन'' का समाजशास्त्रीय अध्ययन।
(ii) 'सुशीला टॉकभौरे' के कथा साहित्य का मनोवैज्ञानिक अध्ययन।
(iii) 'वीरांगना झलकारी बाई' उपन्यास का ऐतिहासिक अध्ययन।
(iv) 'अपने–अपने पिजंरे' का सौन्दर्य शास्त्रीय अध्ययन।
(v) 'तुम्हें बदला ही होगा' उपन्यास का समाजशास्त्रीय अध्ययन।

इससे स्पष्ट है कि लोक साहित्य और परिनिष्ठित साहित्य में अंतर हुए भी कहीं न कहीं एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। मलार्मे ने यह सिद्ध कर दिया है कि ''पूर्ण अहं–चैतन्य की स्थिति में भी लोक मानस सामूहिक अनचेतन की पृष्ठभूमि के साथ विद्यमान रहता है और इसका पूर्ण अहं–चैतन्य से सम्पर्क रहता है। इस लोकतत्व की पहचान परिनिष्ठित साहित्य में प्राप्त उस मिथकीय तत्व में होती है जिसमें भाषा का रूप अर्ध–विस्मृत (हाफ फार्गाटेन) तथा अर्ध–जीवंत दिखायी पड़ता है। वास्तव में मनुष्य में आदिम भाषा के अवशेष के रहने और उसके परिनिष्ठित अभिव्यक्ति में दिखायी पड़ने से ही मिथ का अस्तित्व खोजा गया है। इस प्रकार परिनिष्ठित साहित्य में भी लोकतत्व किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता ही है।''[2] इसका अर्थ यह हुआ कि लोकतत्व वह संजीवनी है जो परिनिष्ठित साहित्य को जीवन शक्ति प्रदान करती है। धन्ना, पीपा, सन्त गाडगे, रविदास, कबीर, नानक, दादू आदि का साहित्य लोकतत्व के कारण ही जिंदा है या यों कहें कि लोकतत्व ही संत साहित्य एवं वर्तमान साहित्य को सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक बनाने का कार्य करता है।

लोकभाशा पर आधारित भाोध पत्र :–लोक भाषा पर आधारित शोधपत्रों को समझने के लिए सबसे पहले यह जानन आवश्यकत होता है कि भाषा कोई भी हो, बोली कोई भी हो वह कभी मरती नहीं है। भाषा का सम्बन्ध मानव जीवन के जन्म से लेकर अन्त तक रहता है। वे भाषाएं उपेक्षित हो जाती हैं जिनमें शोध कार्य कम होते है या जिनको राजनीतिक हस्तक्षेप के चलते मुख्यधारा में शामिल नहीं किया जाता है। भाषा का स्वरूप परिवर्तित होता रहता है। अतः उन लोकभाषाओं पर शोध पत्र लिखे जा सकते हैं जिनको आज उपेक्षा की दृष्टि से देखा जा सकता है। जैसे आदिवासियों की भाषा दलितों की भाषा एवं अन्य आदिम समुदायों की भाषा जो आज भी वे अपनी भाषा के साथ जीते मरते हैं।

2. **क्षेत्रीय गीतों एवं भाशा पर आधारित भाोध पत्र** :– वे शोध पत्र है जो किसी क्षेत्र विशेष या भाषा विशेष पर केन्द्रित रहते हैं। इन गीतों का अध्ययन एवं शोधकार्य बिना क्षेत्र विशेष में जाये प्रमाणिक एवं उपयोगी सिद्ध नहीं होता है।

3. **तुलनात्मक भाोध पत्र** :– इस प्रकार के शोध पत्रों के माध्यम से दो या दो से अधिक साहित्यकारों, विषयों, भाषाओं का अध्ययन किया जाता है। यह सच है कि संसार में प्रत्येक व्यक्ति के विचार एवं जीवन में विभिन्नता होती है। जहाँ दो भाषाओं के साहित्यकारों में समानता होती है वहीं बहुत कुछ भिन्नता भी पायी जाती है। यह विभिन्नता ही इस बात को सिद्ध करती है कि किस प्रकार सभी

प्रकार के विभेदों को मिटाकर समतामूलक समाज का निर्माण हो सकता है। यही शोध समाज के उस स्वरूप को दर्शाता है कि हमारे समाज का अतीत कैसा था? वर्तमान कैसा है? और भविष्य कैसा होगा? इतना ही नहीं एक देश के साहित्यकार और दूसरे देश के साहित्यकार के साहित्य पर शोध करने से प्रत्येक देश की समस्त समस्याओं एवं उन देशों की विकास प्रक्रिया का बोध होता है। अतः निश्चित रूप से स्वीकार किया जा सकता है कि तुलनात्मक शोध एवं शोध पत्रों की वर्तमान समय में अधिक पासंगिकता है।

4. **पाठ भाोध से सम्बन्धित भाोध पत्र** :–

(i) इस प्रकार के शोध पत्रों में पाठ का शोधन किया जाता है अर्थात इस प्रकार के शोध पत्रों के द्वारा यह पता लगाया जाता है कि किसी रचनाकार की रचना का वास्तविक स्वरूप क्या था? या यों कहें कि रचना की असलियत का पता लगाना और भाषागत दोषों को भी दूर किया जाता है साथ ही अनावश्यक अंशों को निकाल दिया जाता है।

(ii) इस प्रकार की रचनाओं में दोषों के आगमन के कई कारण होते थे। जैसे–

क. मुद्रण की व्यवस्था न होना।

ख. प्राचीन रचनाएँ–पत्रों, कपड़ो, पत्थर या मिट्टी पर लिखी जाती थीं।

ग. कहीं आधी–अधूरी ही प्राप्त होती थी।

घ. अनपढ़ या कम पढ़े रचनाकारों की रचनाएं दूसरे अनुयायियों द्वारा लिखते समय उसमें वे अपने मन से कुछ अंश जोड़ घटा देते थे।

ड़. सुनकर लिखने में भी पाठ भेद होना लाजमी है।

5. **साहित्य एवं इतिहास से सम्बन्धि भाोध पत्र** :– ये वे शोध पत्र है जिनमें साहित्य एवं इतिहास की सही जानकारी से ताल्लुक रखा जाता है। अब तक साहित्य एवं इतिहास को जितनी भी सामग्री उपलब्ध है उसमें भरपूर मनमानी की गई है। इतिहास में जो स्थान झलकारीबाई को मिलना चाहिए वह लक्ष्मीबाई को दिया। संतों में जो स्थान दादू, धन्ना, संत गाडगे, नानक, कबीर, रविदास आदि को मिलना चाहिए था वह अन्य लोगों को मिला। अब आजादी के सत्तर वर्ष बाद भी नहीं मिला। जो स्थान वास्तविक स्वतन्त्रता सेनानियों को मिलना चाहिए वह नहीं मिला। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि साहित्य और इतिहास जैसे विषय पर शोध पत्र कितने महत्वपूर्ण हो सकते हैं।

अनुसंधान का क्षेत्र इतना विस्तृत है कि उसकी कोई एक परिभाषा देना सम्भव नहीं है। यदि ध्यान से देखा जाय तो शोध एवं शोध पत्रों को निम्न भागों में बाँट सकते हैं–

1. विषय के अनुसार शोध पत्र।
2. कार्य प्रणाली के आधार पर शोध पत्र–
   - क. प्रयोगात्मक शोध पत्र
   - ख. सर्वेक्षणात्मक शोध पत्र
   - ग. दस्तावेजी शोध पत्र
   - घ. मननात्मक शोध पत्र आदि।

एस0एस0 गणेशन ने इन्हीं प्रकारों का उल्लेख अपनी अनुसंधान प्रविधि में किया है–

1. विषय के अनुसार शोध पत्र मुख्य रूप से दो प्रकार के हो सकते हैं–

(क) मानविकी एवं वैज्ञानिक विषयों से सम्बन्धित शोध पत्र।

(ख) **प्रयोग के आधार पर भाोध पत्रः**– इस प्रकार के शोध पत्रों में प्रयोग के आधार पर व्यक्ति, वस्तु या समाज की सच्चाई या वास्तविक गुणों को जानने के लिए प्रयोग करना पड़ता है। जैसे समाज में जातिवाद या लिंगभेद का पता लगाना हो तो आपको जातिवादी एवं लिंगभेदी बनकर लोगों से सम्पर्क करना होगा। प्रयोगात्मक शोध पत्र तीन प्रकार के होते हैंः–

1. **सैद्धान्तिक भाोध पत्रः**– इस प्रकार के शोध पत्र विज्ञान के नये–नये अविष्कारों से सम्बन्धित होते हैं।
2. **प्रायोगिक भाोध पत्रः**– यह भी नये–नये अविष्कारों से सम्बन्धित होते हैं। सैद्धान्तिक शोध पत्रों में प्रयोगों द्वारा सिद्धान्तों का निर्णय किया जाता है। प्रायोगिक शोध पत्रों में ऐसा नहीं होता है।
3. **क्रियात्मक भाोध पत्रः**– एस0एन0 गणेशन के अनुसार ''किसी विशेष क्षेत्र में कार्य करते हुए ही प्रयोग द्वारा उस क्षेत्र की समस्याओं को सुलझाने के लिए सिद्धान्तों और कार्य पद्धतियों का अविष्कार करना ही क्रियात्मक शोध का उद्देश्य है। उदाहरण के लिए एक क्लास में पढ़ाते समय कई समस्याऐं हो सकती हैं। विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तरों और पहले से अध्ययन में अन्तर होने से एक ही तरह के अध्ययन में भी सबका लाभ नहीं हो सकता है।''[3]
1. **सर्वेक्षण से सम्बन्धित भाोध–पत्रः**– इस प्रकार के शोध पत्र समाज में उत्पन्न होने वाली समस्याओं को जानने एवं उनका समाधान खोजने के लिए किया जाता

है। जैसे– लोगों की राजनैतिक समस्या, धार्मिक समस्या, जातिगत समस्या, आर्थिक एवं सामाजिक आदि क्षेत्रों की समस्याओं को समझने एवं उन्हें हल करने के लिये इस प्रकार के कार्य किये जाते हैं।

2. **निरूपणात्मक भाोध–पत्रः**– इस प्रकार के शोध पत्रों के द्वारा वैचारिक प्रमाणों के आधार पर वस्तु–रूप–निर्णय किया जाता है, जैसे– ओमप्रकाश बाल्मीकि की जूठन आत्मकथा, शरण कुमार लिम्बाले की 'अक्करमासी'' आत्मकथा, सुशीला टॉकभौरे का उपन्यास, 'तुम्हें बदलना ही होगा' आदि रचनाएँ म0प्र0, उ0प्र0 एवं महाराष्ट्र की सामाजिक, धार्मिक एवं जातिगत राजनैतिक, दशाओं का ज्ञान कराती हैं। इसलिए प्रत्येक रचना एवं रचनाकार के आधार पर अनेक शोध पत्र लिखे जा सकते हैं।

3. **व्याख्यात्मक भाोध पत्रः**– जब किसी रचना या रचनाकार की सीधी व्याख्या सम्भव न हो तब वहाँ व्याख्यात्मक शोध पत्रों की आवश्यकता पड़ती है। जैसे संत गाडगे के सामाजिक अवदान का अध्ययन करना हो तो पहले उनके सामाजिक एव ंमानवीय चिंतन की व्याख्या करनी होगी। सन्त रविदास की वैचारिकी का अध्ययन करना हो तो सबसे पहले उनके दार्शनिक चिंतन की व्याख्या करनी होगी। इसी प्रकार दलित साहित्य की भाषा, उनका समय, उनकी परिस्थितियों एवं उनके पात्रों आदि की व्याख्या द्वारा ही तत्कालीन समाज के स्वरूप को समझा जा सकता है।

4. **मूल्यांकन परक भाोध–पत्रः**– इस प्रकार के शोध पत्र लिखते समय सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य को दृष्टि में रखकर लेखक एवं कृति का मूल्य निर्धारण किया जाता ह। अगर डॉ0 सुशीला टॉकभौरे के उपन्यासों का मूल्यांकन करना हो तो उनके पूर्व उपन्यासों की प्रवृत्तियों के परिप्रेक्ष्य में टॉकभौरे द्वारा प्रतिष्ठापित नई प्रवृत्तियों का उद्घाटन, (2) उपन्यास को अधिक सामाजिक चेतना प्रदान करने में नये तत्वों का योगदान, (3) परवर्ती उपन्यास साहित्य पर अपनी छाप बनाये रखने की क्षमता। इस प्रकार हिन्दी उपन्यास की सम्पूर्ण धारा में टॉकभौरे के उपन्यासों का स्थान।

क. **लक्ष्य के अनुसार भाोध पत्रः**– अनेक प्रकार के अनुसंधानों को उनके लक्ष्यों के आधार पर चार भागों में बाँटा जा सकता है– (i) सकारात्मक, (ii) स्तर निर्णायक, (iii) सत्याख्यानक, (iv) निर्णात्मक

(i) **सकारात्मकः**– ''अनुसंधान प्रत्यक्ष तथ्यों पर आधारित हो और उसका उद्देश्य केवल वस्तुओं प्रतिभासों और क्रिया–प्रतिक्रियाओं के स्वरूप मात्र का निर्णय हो तो उसे सकारात्मक कहा जाता है। इससे केवल कुछ सामग्रो संचित करके प्रस्तुत

करना पर्याप्त नहीं हैं, अज्ञात तथ्यों तथा परवर्ती दशा में विश्लेषण और गम्भीर अध्ययन एवं सैद्धान्तीकरण के लिए योग्य सामग्री प्रस्तुत करना ही शोध माना जायेगा।''[4]

(ii) **स्तर निर्णायकः**– अनुसंधान का उद्देश्य केवल रूप निर्णय न होकर स्तरीय या आदर्श रूप का भी निर्णय हो तो वह स्तर निर्णायक अनुसंधान माना जायेगा। मानविकी के समस्त विषयों में इसका प्रयोग हो सकता है।

(iii) **सत्याख्यानकः**– गोचर वस्तु सत्यों के परे जाकर उन सबके लिए आधार भूत सार्वलौकिक तथ्यों की खोज करके सिद्धान्त बनाना लक्ष्य हो तो अनुसंधान सत्याख्यानक होता है।

(iv) **निर्णात्मकः**– यदि अनुसंधान का अंतिम लक्ष्य इस तरह केवल तथ्यों, सत्यों और सिद्धान्तों का ज्ञान मात्र न होकर उनके प्रायोगिक उपयोग के द्वारा वस्तु क्षेत्र में निर्माण करना हो तो उसे निर्माणात्मक अनुसंधान माना जायेगा।

निश्कर्श

निष्कर्षतः कह सकत हैं कि व्यक्ति एवं समाज की आवश्यकतानुसार शोध पत्रों को अनेक श्रेणियों में बाँटकर यदि अनुसंधान किया जाये तो निश्चित रूप से वह समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता है। समाज के बहुत से ऐसे पक्ष हैं जहां अनुसंधान की अपार संभावना बनी रहती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *बैजनाथ सिंह –शोध : स्वरूप एवं मानक व्यावहारिक कार्य विधि, वाणी प्रकाशन, 21–ए, दरियागंज, नई दिल्ली–110002 पृ0सं0 28*
2. *बैजनाथ सिंह –शोध : स्वरूप एवं मानक व्यावहारिक कार्य विधि पृ0–28–29*
3. *एस.एन. गणेशन : अनुसंधान प्रविधि लोकभारती प्रकाशन, दरबारी बिल्डिंग, एम0जी0 मार्ग इलाहाबाद–1 पृ0सं0 –70*
4. *एस0एन0 गणेशन : अनुसंधान प्रविधि पृ0–79*